JETIR.ORG ISSN: 2349-5162 | ESTD Year : 2014 | Monthly Issue
JOURNAL OF EMERGING TECHNOLOGIES AND INNOVATIVE RESEARCH (JETIR)
An International Scholarly Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

दशनामी नागा संन्यासी परम्परा का भारतीय संस्कृति में महत्व

शोधार्थी
पुनवासी गिरि
इतिहास विभाग
एन०ए०एस० (पी०जी०) कॉलेज, मेरठ

सारांश

भारतवर्ष विश्व में अपनी सभ्यता और संस्कृति की विशिष्ठता के लिए जाना जाता है। इसी सभ्यता और संस्कृति ने विश्व को भारत की और आकर्षित किया। कालान्तर में सभ्यता और संस्कृति के बदलते हुए स्वरूप में साधु–सन्तों की अनेकों परम्पराओं का उदय व विकास हुआ। जिसने समय–समय पर विश्व व समाज का अपने ज्ञान व दर्शन से मार्ग–दर्शन किया। इन्हीं साधु–सन्तों की परम्परा में दशनामी नागा–संन्यासियों का उदय हुआ। जिसने भारतीय धार्मिक संगठन को विकसित कर देश की राजनीतिक, आर्थिक व्यवस्था व सामाजिक धार्मिक अवस्था तथा संस्कृति को प्रभावित किया। अतः यह शोध पत्र दशनामी नागा–संन्यासियों का भारतीय संस्कृति में महत्व व उपयोगिता का विश्लेषणात्मक अध्ययन कर सकारात्मक पक्ष को प्रस्तुत करना हैं।

मुख्य शब्द – दशनामी नागा–संन्यासी, महत्व, उपयोगिता, प्रभाव एवं सुझाव।

प्रस्तावना

भारतीय संस्कृति की विशिष्टता को शाश्वत औरप प्रगतिशील बनाये रखने में जिन धार्मिक सम्प्रदायों ने योगदान किया हैं उनमें दशनामी नागा–संन्यासियों की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण और सराहनीय हैं।

प्राचीन काल में साधु–सन्त सांसारिक क्रिया–कलापों से निर्लिप्त रहते हुए तथा वनों में तपस्या करते हुए मनन–चिन्तन में लीन रहते थे। किन्तु आगे चलकर साधु–सम्प्रदायों ने सामाजिक चुनौती को स्वीकार हुए अपने मठ एवं अखाड़ों की स्थापना बड़े–बड़े नगरों में की तथा समाज के साथ सीधा सम्बन्ध स्थापित किया। साधु–संतों द्वारा समाज सेवा की परम्परा बौद्ध भिक्षुओं के द्वारा प्रारम्भ की गयी थी। अतएव साधु सम्प्रदाय ने धर्म प्रचारक के अतिरिक्त समाज सेवा को भी अपना लक्ष्य बना लिया था। उन्होंने विद्यालय, औषधालय आदि का निर्माण किया तथा देश–विदेश में अपने धर्म एवं दर्शन का भी प्रचार किया। इन्होंने जात–पात छुआ–छूत ऊँच–नीच धार्मिक, सामाजिक समन्यव भाई–चारें तथा एक स्वस्थ समाज के निर्माण का प्रयास किया।

साधु–संगठन भी समाज का अभिन्न अंग है तथा उसकी सारी गतिविधियों का केन्द्र समाज ही हैं अतएव कोई भी साधु संगठन अपने सामाजिक दायित्वों से मुँह नहीं मोड़ सकता क्योंकि धार्मिक संगठन देश की राजनीतिक, आर्थिक व्यवस्था सामाजिक धार्मिक अवस्था एवं संस्कृति को प्रभावित करते हैं।

उद्देश्य

1. दशनामी नागा परम्परा का भारतीय सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन में महत्व का विश्लेषण कर सकारात्मक पक्ष को प्रस्तुत करना।

2. नागा संन्यासी परम्परा का प्राचीन काले से आधुनिक काल में सांस्कृतिक व सामाजिक जीवन में हुए परिवर्तन का तुलना करना।

क्रिया विधि

परम्परागत विधि व साहित्यिक विधि।

नागा संन्यासियों के प्रमुख स्थलों से सम्बन्धित सामान्य विवरण

मठ	गोवर्धन पीठ	शारदा पीठ	शृंगेरी पीठ	ज्योतिष पीठ
स्थान	पुरी (पूर्व)	द्वारिका (पश्चिम)	शृंगेरी (दक्षिण)	जोशी (उत्तराखण्ड)
प्रथम आचार्य	पदमपाद्	विश्वस्वरूप या सुरेश्वरा चार्य	पृथ्वीधर अथवा हस्तामलक	त्रोटका चार्य
अधिकार क्षेत्र	अंग, वंग, कलिंग, मगध, उत्कल वीदर, बरार	सिन्धु, सौवीर सौराष्ट्र, राजपूताना पश्चिमी भारत	आन्ध्र, द्रविण कर्नाटक, केरल एवं महाराष्ट्र	कुरू, पंचाल पंजाब कश्मीर कम्बोज
सम्बद्ध शाखये	वन और आरण्यक	तीर्थ एवं आश्रम	पुरी, भारती सरस्वती	गिरि, पर्वत व सागर
नवदीक्षित की उपाधि	प्रकाश	स्वरूप	चेतन	नन्द या आनन्द
वेद	ऋग्वेद	सामवेद	यजुर्वेद	अथर्ववेद
अधिष्ठाता देवता	जगन्नाथ	सिद्धेश्वर	आदिवाराह	नारायण
देवी	विमला	भद्रकाली	कामाक्षी	पुष्यगिरि
तीर्थ नदी	महोदक्षि	गोमती	तुंगभद्रा	अलकनन्दा
सिद्धान्त अथवा महावाक्य	प्रधान ब्रहम (ब्रह्मपूर्णज्ञान)	तत्वमसि (तुम वह हा)	अहंब्रह्मस्मि मैं ब्रहमा हूँ	अयमात्मा ब्रह्मम यह आत्याही ब्रहम है।
गौत्र	कश्यप या अव्यय	अग्नि या अविगत	भूर्मवः	भृगु
मंदिर क्षेत्र	जगन्नाथपुरी	द्वारका	रामेश्वरम्	बद्रिकाश्रम
उपाधि के अनुसार उपनिषद् का स्वाध्याय	वन ऐत्तरीय अरण्य, कौषितकि	तीर्थ, केन आश्रय छान्दोग्य	पुरी, कठ भारतीय तैतरीय सरस्वती	गिरि, मुडक पर्वत, सागर, मान्डूक्य
प्रथाओं अथवा रिवाजों के	भोगवार वे जो सभी ऐहिक वस्तुओं के	**कोटवार** जो बहुत अल्प	भूरिवार वे जो वन के उत्पादकों	आनन्दवाद, जो भिक्षा नहीं लेते

अनुसार किये गये विभाग	प्रति उदासीन हैं केवल उन्ही वस्तुओं का भोग करते हैं जो जीवन के लिए आवश्यक है।	माा में भोजन का प्रयास करते हैं।	एवं जड़ीर बूटियों पर ही जीवन व्यतीत करते हैं।	(मांगते) हैं स्वतन्त्रदान पर जीवन व्यतीत करते हैं।

नागा संन्यासियों के सामाजिक कर्त्तव्य

डॉ० बंशीधर त्रिपाठी ने साधुओं के सामाजिक एवं धार्मिक कर्त्तव्यों को निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया हैं –

1. दुःखी व निराश व्यक्ति जो उनकी सहायता चाहते हैं, को सांत्वना देना।

2. वृहत् समाज में धार्मिक सिद्धान्तों का प्रचार या संन्यासी वेश में घूम–घूम कर धार्मिक माहौल का निर्माण करना।

3. विद्यालय, अस्पताल आदि का स्थापना कर तथा गरीब एवं दीन–दुखियों की सहायता के द्वारा समाज–सेवा करना।

धार्मिक कर्त्तव्य

1. विशेष पर्वों जैसे एकादशी आदि के समय उपवास द्वारा स्वयं को पवित्र करना तथा भोजन आदि के विषय में नियम का पालन करना।

2. पूजा–कार्य।

3. धार्मिक प्रवचनों में हिस्सा लेना।

4. धर्म ग्रंथो का अध्ययन तथा अपने सम्प्रदाय के साहित्य का ज्ञान प्राप्त करना।

5. तीर्थ यात्रा।

6. अन्य धार्मिक कर्त्तव्य।

बैद्यनाथ सरस्वती एवं सुरजीत सिन्हा ने तीन धार्मिक कर्त्तव्य बताये है– 1. आदर्श प्रतिपादन अर्थात् आदर्श जीवन के मानकों को प्रस्तुत करना। 2. दुःख निर्वाण, अर्थात् आध्यात्मिक शक्ति अथवा चमत्कार द्वारा लोगों को दुःखों से मुक्ति दिलाना एवं 3. धर्म रक्षा अर्थात् अस्त्रों द्वारा भी धर्म की रक्षा करना।

प्राचीन काल में भारतवर्ष का सामाजिक ढाँचा वर्ण–व्यवस्था पर आधारित था जो कि मध्य काल के आगमन तक जाति–व्यवस्था में बदल चुका था। समाज में ब्राह्मणों ने अपनी सर्वोच्च स्थिति को अक्षुण्ण रखा था। मध्यकाल में रचित तुलसीदास की **'रामचरित मानस'** में स्थान–स्थान पर **'विप्रपदपूजा'** के आग्रह से ब्राह्मणों की स्थिति को आसानी से समझा जा सकता हैं। बौद्ध मठों के उपरान्त सर्वप्रथम दशनामी अखाड़ों ने ब्राह्मणों के अलावा क्षत्रियों तथा वैश्यों को अपने संगठन में (प्रवेश) दिया। उन्होंने जाति की अपेक्षा स्वस्थ व निरोग व्यक्तियों की ओर अपना ध्यान केन्द्रित किया। यद्यपि शूद्रों को अखाड़े में प्रवेश न देने के कारण थोड़ा बहुत जातिवाद अखाड़ों में व्याप्त था।

मध्यकाल में स्थापित शैव व वैष्णव अखाड़े उत्तर भारत के सामाजिक ढाँचे में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन की झलक प्रस्तुत करते हैं। परम्परा से चले आ रहे समाज में व्याप्त जड़ता तथा रूढ़िवादिता को समाप्त करने की दिशा में योद्धा–संन्यासियों के संगठनों ने एक मजबूत कदम उठाया। मध्यकाल में चल रहे भक्ति–आन्दोलन से सम्बन्धित संतो ने जात–पात छुआ–छूत तथा ऊँच–नीच की निंदा की तथा भाई–चारे और समन्वय पर बल दिया। इन संतो के सिद्धान्तों को व्यवहारिक रूप देने का अथवा उनके क्रियान्वयन का श्रेय अखाड़ों को ही दिया जाना चाहिए।

मध्यकाल में दशनामी संन्यासियों द्वारा हिन्दू राजाओं को सैन्य सहायता प्रदान की गई थी। दशनामियो ंने राजपूताना, जोधपुर, जैसलमेर, बड़ौदा, कच्छ, मेवाड़ अजमेर तथा झाँसी आदि के शासको की सेना में भर्ती होकर उनकी सहायता की एवं बदले में उनको ध्यान, सम्मान तथा जागीरें आदि देकर इन राजाओं ने कृतार्थ किया। अनेक राज्यों ने इनके प्रति सम्मान व्यक्त करते हुए भगवा रंग के झंडे को

अपना राजकीय झंड़े के रूप में अपना लिया तथा नागा अखाड़ों के लिए वार्षिक अनुदान बाँध दिया। य़द्यपि ये राज्य अब भारतीय संध के अंग बन चुके हैं तथापि उनमें से कुछ जैसे कच्छ, इन्दौर आदि अखाड़ों को वार्षिक अनुदान देते हैं। वे भगवा रंग के झंड़े का भी प्रयोग करते हैं।

उत्तर मध्य काल में राजेन्द्र गिरि तथा हिम्मत बहादुर जैसे नागा–योद्धा अपने समय के सर्वश्रेष्ठ योद्धाओं में गिने जाते थे। नागा संन्यासियों ने प्राचीन मंदिरों व तीर्थो की रक्षा के लिए आक्रमणकारियों के विरूद्ध अनेक बार भयंकर युद्ध किया था। गुजरात में द्वारिकाधीश मंदिर, कांशी में विश्वनाथ मंदिर, तथा मथुरा के मंदिरों की रक्षा करते हुए हजारों नागा–संन्यासी वीर गति को प्राप्त हुए।

आधुनिक समय में भी नागाओं द्वारा तीर्थ यात्रा पर निकलना उनके धार्मिक जीवन का एक आवश्यक अंग है। दशनामी संन्यासी देश के शैव, धर्म से सम्बन्धित सभी स्थानों की यात्रा करते हैं। दशनामियों की तीर्थयात्रा के सर्वाधिक महत्वपूर्ण केन्द्र स्वयं प्रकट हुए एवं देदीव्यमान द्वादश ज्योतिर्लिंग हैं। जिन स्थानों पर ये शिवलिंग प्रकट हुए हैं उन्हें धाम कहा जाता है। इन बारह धामों का अखिल भारतीय महत्व है। ये स्थान है – कठियावाड़ (गुजरात) में सोमनाथ, मैसूर में माल्लिकार्जुन, उज्जैन में महाकालेश्वर नर्मदा नदी में एक द्वीप पर स्थित ओंकारेश्वर, केदारनाथ (उत्तराखण्ड), भीमशंकर (पूजा) त्रपंबकनाथ (नासिक) वैजनाथ (बिहार) नागनाथ (अहमदनगर) रामेश्वरउ (तमिलनाडू) घ्रसनेश्वर (एलोरा) एवं अमरनाथ (कश्मीर) इन सभी धामों में दशनामी नागाओं के स्थान हैं और उन्हें भोजन तथा आवास की सुविधा उपलब्ध रहती हैं।

धर्म प्रचार तथा शिक्षा के क्षेत्र में दशनामी नागा संन्यासी

दशनामी नागा–संन्यासी केवल धर्म रक्षक ही नहीं अपितु धर्म–प्रचारक की भूमिका भी बखूबी निभाई। शैव, वैष्णव, उदासी, निर्मल सभी सम्प्रदायों ने अपने–अपने सम्प्रदाय के धर्म प्रचार–प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान दिया। अठारहवी शताब्दी के अंत तक देश में ब्रिटिश शासन की जड़े मजबूती से जमने लगी थीं और उन्नीसवी शताब्दी के उत्तरार्द्ध में उन्होंने भारत पर पूरी तरह से अपना अधिकार कर लिया। अंग्रेजो के कठिन प्रतिरोध के कारण शैव व वैष्णव नागा साधुओं की राजनीतिक तथा आर्थिक भूमिका धीरे–धीरे समाप्त हो गयी तथा वे पूरी तरह धर्म–प्रचार और समाज–सेवा के कार्य में लग गये।

दशनामी सम्प्रदाय में अनेक विद्वान संत उत्पन्न हुए जिन्होंने संस्कृत भाषा में अनेक महत्वपूर्ण ग्रंथों की रचना की। इस सम्बन्ध में पहला नाम मधुसूदन सरस्वती का लिया जा सकता हैं। जो वाराणसीमें रहते थे और अकबर के समकालीन थे। इन्होंने दशनामी अखाड़ों का मार्ग प्रशस्त किया था। मधुसूदन सरस्वती वेदान्त के प्रकाण्ड विद्वान थे एवं इनकी प्रमुख रचना **'अद्वैत–सिद्धि'** है जो वेदान्त–दर्शन के अध्येताओं में बहुत लोकप्रिय हैं। स्वामी भास्करानन्द सरस्वती जिन्होंने **'स्वराज्यसिद्धि'** के ऊपर भाष्य लिखा था, का नाम महत्वपूर्ण विद्वानों में सम्मिलित हैं, इनके अलावा स्वामी विशुद्धानन्द सरस्वती, स्वामी मनिष्यानन्द सरस्वती, स्वामी कैलाश पर्वत, स्वामी परमात्मानन्द गिरि शंकर चैतन्य भारती आदि दशनामी संन्यासियों ने शिक्षा व ज्ञान के क्षेत्र में पश अर्जित किया।

गुरू सहायक एवं सलाहकार के रूप में दशनामी नागा–संन्यासी

निस्संदेह मुक्ति की कामना हिन्दू जीवन का चरम लक्ष्य हैं और जो मुक्ति लाभ हेतु ही अपना जीवन व्यतीत कर रहा हो वह सर्वाधिक आदर का पात्र समझा जाता है। साधु–सन्त गृहस्थों को विभिन्न प्रकार का धार्मिक व व्यावहारिक ज्ञान प्रदान करते हैं जैसे निर्देश मंत्रणा, उपदेश शिक्षा एवं दीक्षा आदि।

धार्मिक प्रवृत्ति के नाना प्रकार की समस्याओं जैसे–धन व यश प्राप्त करने की इच्छा से भाग्यफल जानने की इच्छा से, सन्तानोत्पत्ति की कामना से, आपसी एवं पारिवारिक झगड़ों की निपटाने की कामना से शादी–विवाह के विषय में सलाह लेने तथा आध्यात्मिक ज्ञान आदि प्राप्त करने की कामना से लोग दशनामी नागा गुरूओं के पास आते हैं। बड़े–बड़े राजनेता भी इसमें पीछे रहते और वे गुप्त रूप से अपने राजनैतिक जीवन में सफलता हेतु आडंबरपूर्ण यज्ञों का आयोजन कराते हैं तथा उनके यथेष्ट मात्रा में भेंट व उपहार भी प्रदान करते है।

निष्कर्ष

स्पष्ट है कि सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन में नागा–साधुओं ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई हैं, वे वर्तमान वैज्ञानिक युग में भी जबकि लोगों का धर्म तथा आध्यात्म पर से विश्वास कम हो रहा हैं, लोगों के आकर्षण का केन्द्र बने हुए हैं।

सुझाव

आध्यात्मिक ज्ञान के बिना मानव जीवन अधूरा हैं अतः हम सब विश्वास एवं भक्ति–भाव से ओत–प्रोत होकर आध्यात्म की ओर अग्रसर हो, यह तभी सम्भव हैं जब तक कि धर्म के गुरूओं में आड़म्बर व निजी–स्वार्थ की भावना समाप्त न हो जाये।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. Giri. Swami Sadanand (1976) society and Sannyasi, Page 91-95.
2. Tripathi, B.D. (1978) Sadbus of India, Page 16-17.
3. Ascetis of Kashi, Page 177.
4. Giri Swami Sadanand (1976) Society and Sannyasi, Page 26.
5. Gross, Robert Lewis (1992) 'Sadhus of India' Page 127.
6. Sarkar, Judunath (1950) A History of Dashname Naga Sannyaris, Page 262-275.
7. लालपुरी महंत, श्री पंचायती अखाड़ा महानिर्वाणी एवं दशनाम नागा संन्यासियों का संक्षिप्त परिचय, पृ० 7।
8. Indian Antigrery (1907), Page 61. Gupta, H.R., 'Marathas and Panipat' (Chandigarh, 1961), Page 88.
9. चतुर्वेदी, परशुराम (उत्तर भारत की संत परम्परा) पृ० 57।
10. उपाध्याय, बलदेव 'काशी का पांडित्य परम्परा' (वि०वि० प्रकाशन, वाराणसी) 1983 पृ० 37–41
11. Singer, Philip The Hindu Holy Men : A study in Charishma (Unpublished Thesis cyracure University Department of Andhra pologey, 1961) page 32. A Micro film of this thesis is available in Nehru Memorial Muslim and Library, New Delhi.
12. त्रिपाठी, अशोक 2019 (नागा संन्यासियों का इतिहास) 30, थार्नहिल रोड़, सिविल लाइन्स, इलाहाबाद–1